UNIVERSAL LIBRARY

OU_182012

UNIVERSAL LIBRARY

UNIVERSAL LIBRARY

OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY

Call No. H81.6/T62K Accession No. G.H. 898

Author तिवारी, रामेश्वर।

Title कस्तूर बा।1945

This book should be returned on or before the date last marked below.

कस्तूर बा

(पद्य)

पं० दामोदर तिवारी 'साहित्य रत्न'

सोल एजेन्ट:-

सुलभ साहित्य मंडल

सिंहन स्ट्रीट, अहियागंज लखनऊ

प्रथम बार] १९४६ [मूल्य १)

प्रकाशक
आल इन्डिया पब्लिशिंग कम्पनी,
लखनऊ। Checked 1965

सर्वाधिकार लेखक को सुरक्षित हैं।

Checked 1969

मुद्रक
मदनमोहन शुक्ल "मदनेश"
साहित्य मन्दिर प्रेस लिमिटेड लखनऊ।

श्रद्धाँजलि

अमरी 'बा'! नव-संतति तेरी,
है दबी भार, बन्धन ढेरी।
है मूक-सदृश न बोल सकती।
निज हृदयंगम न खोल सकती।
केवल, कह सकती 'बा'! तेरे।
चरणों में श्रद्धाँजलि हमरी॥

दामोदर

"तू जेल में जाकर मर गई तो मैं जीवन भर 'जगदम्बा' की तरह तेरी पूजा करूंगा।"

बापू

कस्तूर बा

एक दिवस या एक वर्ष नाहिं, आजीवन का साथ रहा ।
बापू ने लगाये कर अपने, तहँ 'बा' का पहले माथ रहा ।।

बापू को

प्राक्कथन

कस्तूर बा का साक्षात् दर्शन मुझे नहीं मिला। जब से मैंने पत्र-पत्रिकाओं को पढ़ना प्रारम्भ किया तबसे उनके चित्रावलोकन का सौभाग्य प्राप्त था। बापू की आत्म-कथा में 'बा' के त्याग, सहयोग एवं सहिष्णुता को पढ़ कर मेरे मन में उस महान् आत्मा के प्रति विशेष श्रद्धा तथा भक्ति उत्पन्न हुई। यों तो देश-हितेच्छुओं के प्रति श्रद्धा होना स्वाभाविक है किन्तु बा ने बापू को भारतीय संस्कृति, मर्यादा तथा मानवता की रक्षा में जितना सहयोग दिया है उससे बा का स्थान बापू से कहीं कम नहीं है; ऐसा मेरा विश्वास है। देश का बच्चा-बच्चा 'बा' को उसी तरह पूज्यनीया समझेगा जिस तरह मैं समझता हूँ, ऐसा मेरा भरोसा है। भारतीय पत्नि-आदर्श को बा ने किस तरह निभाया है यह मेरी-मां बहनों के लिए अनुकरणीय है। मैंने बा को किन-किन रूपों में देखा है, आप इस नन्हीं सी पुस्तिका द्वारा समझ सकते हैं।

आगा खां भवन में बा की मृत्यु का समाचार पत्रों में पढ़ते ही मुझे भी उतना ही शोक हुआ जितना एक देश प्रिय व्यक्ति को होना चाहिए। मेरे सामने 'बा' की सेवाओं के सभी चित्र क्रमशः

आने लगे। प्रस्तुत पुस्तिका उन्हीं चित्रों का एकत्री करण कहते हुए मुझे संकोच नहीं हो रहा है। अपने को 'बा' के चरित्र के ऊपर प्रकाश डालने वाला कहकर मैं मसखरा का पात्र नहीं बनना चाहता। मेरे जैसा साधारण व्यक्ति इतना प्रयास नहीं कर सकता। हाँ, मैंने अँगुली से संकेत करके चन्द्रमा की शीतलता एवं तद्जनित गुण अवश्य दिखाया है।

कस्तूर बा की मृत्यु के पहले ही मैंने कुछ रचनाएं उनके विषय में की थीं। उनकी मृत्यु के पश्चात् मेरी भक्ति और भी प्रौढ़ हो गई और घरेलू कार्यों से अवकाश पाकर मैंने कुछ न कुछ लिखना जारी रक्खा।

मेरी इस रचना में पाठकों को यत्र-तत्र भाषा ऊबड़-खाबड़ भी मिल सकती है किन्तु मैंने इतना जानते हुए भी; भाषा को कोमल बनाने के लिए भावों की तिलाञ्जलि देना उचित नहीं समझा है। खद्दर का ऊबड़-खाबड़ होना ही शोभा है। हाँ, शुद्धता अनिवार्य है। एक अबोध बालक तुतली भाषा में ही अपनी मां के गुणगान करता हो तो अंक में लगाने ही योग्य है; ऐसा मैंने सोचा है और बन्धुओं तथा मां-बहनों से मैं आशा भी रखता हूँ।

१९४५ में मैंने यह पुस्तिका बापू को समर्पित की थी।

उस समय कागज की न्यूनता के कारण इसका प्रकाशन नहीं हो पाया था। पाण्डुलिपि ही मैंने उनके यहां भेज दी थी। उनके यहां से श्रीमन्नारायणजी का लिखा हुआ स्वीकृति पत्र भी आया जो इसी संस्करण में आगे छपा हुआ है।

कस्तूर बा के अतिरिक्त इस पुस्तिका में कुछ रचनाएं फुटकल भी हैं किन्तु वे सभी "बा" के अंग सी प्रतीत हुईं इसी से मैंने उन्हें भी प्रकाशित करना उचित समझा।

"महासभा" का प्रयोग मैंने कांग्रेस के लिए किया है दूसरी किसी संस्था से पुयोजन नहीं।

मेरे मित्र शिवकुमार जी ओझा बी. ए., एस. के. सिनहा एम.ए., बा० छैल बिहारी तथा प्रोफेसर गर्ग ने जो मुझे सहयोग तथा उत्साह दिया उसके लिए उनका आभारी हूँ।

मैं इस प्रयास में कहां तक सफल हूँ इसका निर्णय पाठक करेंगे।

सिंहन स्ट्रीट, —दामोदर
अहियागंज, लखनऊ
२१-१२-४५

संक्षिप्त जीवनी

—:o:—

'बा' के जीवन-चरित्र को पढ़ना तथा तदनुसार अपने जीवन को बनाना प्रत्येक भारतीय महिला का कर्तव्य है। भारतीय सभ्यता का जीता-जागता चित्र अगर देखने की अभिलाषा हो तो 'बा' के जीवन-चरित्र का मनन अनिवार्य है। भारतवर्ष अपनी सभ्यता, संस्कृति तथा आदर्श में संसार से एक कदम आगे रहा है और आज भी आगे है। हम बन्धन में जकड़ गये हैं किन्तु हमारी सभ्यता का लोप नहीं हुआ है। हमारी माताएं, बहनों ने आज भी अपने चारित्रिक बल द्वारा हमारा मस्तक ऊँचा रक्खा है। 'बा' ने अपने पतिव्रत धर्म तथा भारतीय रहन-सहन को अपना कर हमारा गौरव बढ़ाया है। उस महान आत्मा का जीवन-चरित्र रामायण और गीता की भांति प्रत्येक भारतीय के घर में होना चाहिए। 'बा' ने भारतवर्ष की स्वतन्त्रता, इसकी सभ्यता तथा संस्कृति की रक्षा के लिए अपना जीवन ही समर्पित किया था। दक्षिण अफ्रिका से लेकर भारतवर्ष में तक, जब-जब बापू ने असहयोग आन्दोलन चलाया; 'बा' उनके साथ रही। निज ओद्र-जनित सन्तान से बढ़कर 'बा' ने भारतीय सन्तानों को समझा। सत्याग्रह आश्रम में अपनी मां की तरह सब को भोजन की व्यवस्था करना तथा एक परिवार की तरह रखना 'बा' का

मुख्य कर्तव्य था। ईसाई, पारसी, मुसलमान तथा हिन्दू सभी जाति के सत्याग्रहियों को अपने पुत्र सा समझना और उनकी सेवा सुश्रुषा करना बा का आदर्श था जिसके सामने सबों को नत मस्तक होना पड़ा।

'बा' का जन्म १८७० में काठियावाड़ के अन्तर्गत पोरबन्दर में हुआ था। इनके पिता एक प्रतिष्ठित व्यक्ति थे। कहा जाता है कि बापू का जन्म भी उसी दिन हुआ था जिस दिन बा का। बा का बचपन बड़े लाड़प्यार में बीता। सामाजिक बन्धनों तथा उस समय की प्रथा के अनुसार बा को आधुनिक ढंग की शिक्षा न दी गई। हां, वंश परम्परा के अनुसार 'बा' को मानव सेवा की शिक्षा मिली। सब को समान समझने का ज्ञान मिला। नम्रता के भाव मिले। भारतीय सतीत्व का ज्ञान प्राप्त हुआ। आदर्श-चरित्र तथा जीवन का संस्कार मिला। साथ ही साधारण गुजराती भाषा का बोध हुआ। पाश्चात्य रंग नहीं मिला। पाश्चात्य शुद्धता एवं पवित्रता का अनुभव करने मात्र की शिक्षा मिली।

विवाह—जब बापू और बा तेरह वर्ष के थे तो इन दोनों महान आत्माओं का वैवाहिक सम्बन्ध हुआ। मानव-सेवक तथा सेविका का गठ-बंधन हुआ। वह गठबंधन आध्यात्मिक ही नहीं वरन् सांसारिक भी था। दम्पति ने भारत एवं भारतीय स्वतंत्रता के लिए कंधे से कंधा मिलाकर चलने का गठबंधन किया। स्वयं सेवक तथा सेविकाओं की भाँति अगर पति ने कहा—"एक" तो पत्नी ने "दो", पति ने बाँया पैर उठाया तो पत्नि ने भी। दोनों

व्यक्ति कदम मिलाते हुए मानव सेवा की ओर बढ़ने चले। दो आत्मायें एक सूत्र में बँध गई। 'बा' के गर्भसे चार पुत्र हुए उनके विषय में हम सब अनभिज्ञ नहीं हैं। मानव मात्र ही 'बा' का पुत्र था। अपने औद्र-जनित पुत्र की भाँति 'बा' ने विश्व के पुत्रों को देखा। अब अपना और पराया का प्रश्न ही विलग हो जाता है। सभी अपने हुए पराया कोई नहीं।

भारतीय परम्परा—'बा' भारतीय परम्परा में पली थी। बापू के साथ यूरोप तथा अन्य देशों के सम्पर्क में रहकर भी 'बा' ने भारतीय वेश भूषा, खान-पान तथा रहन-सहन की तिलांजलि नहीं दी।' बापू और बा के साथ भोजन तथा वस्त्र के सबध में कभी-कभी किस तरह के मतभेद खड़े हुए और दम्पति ने किस तरह समझौता कर लिया, आदि का जिक्र इस नन्हीं सी पुस्तिका में करने का स्थान नहीं। बापू की आत्म कथा जैसा धर्मग्रन्थ उसका भंडार है। जिन्हें पढ़ने का अवकाश अभी तक न मिला हो वे एक बार मेरे कहने से अवश्य पढ़ें। उन्हें पता चल जायगा कि 'बा' का चरित्र बापू से भी प्रौढ़ रहा है। बापू कहीं कहीं विचलित भी हो गये लेकिन बा अचल रहीं। यह आदर्श हमारे माँ-बहनों के लिए शिक्षा-प्रद है।

सत्याग्रही—बापू द्वारा सञ्चालित सभी आन्दोलनों में बा का कदम आगे ही रहा। अपने जीवन में बा ने कई बार जेल यात्रा की। तिरंगा झंडा लेकर भारतीय स्वतंत्रता के निमित्त सदा क्षेत्र में डटी रहीं। जेल के बाहर जब तक रही तब तक

सत्याग्रहियों की सेवा करती रही। जेल की यातनाएँ, अधिकारियों के अत्याचार "बा" को विचलित नहीं कर सके। दक्षिण-अफ्रिका का आन्दोलन, तथा भारत में बापू द्वारा सञ्चालित नमक एवं असहयोग आदि आन्दोलनों में 'बा' ने अपना कर्तव्य पूरा किया। आगे-आगे बापू और पीछे-पीछे "बा" शंकर और पार्वती की तरह चलते रहे बापू ने बा को सदा अपने साथ पाया।

अन्तिम यात्रा—१९३९ के युद्ध में भारत का कहाँ तक कल्याण रहा है; कहने की बात नहीं। इस युद्ध में भारत का क्या स्थान रहेगा इसी को समझने के लिए अगस्त १९४२ में कांग्रेस की बैठक बम्बई में हुई। बापू तथा बा भी उसमें उपस्थित हुए। ९ अगस्त को शासकों ने भारत के अन्य कर्णधारों के साथ साथ दम्पति को भी गिरफ्तार किया। जेल-यात्रा के नाते 'बा' की यही अन्तिम-यात्रा थी। कारागृह में ही 'बा' की समाधि बनने वाली थी। २२ फरवरी १९४४ को यह महान् आत्मा आगा खाँ भवन से स्वर्ग चली गई। हम 'बा-बा" चिल्लाते रह गये। किन्तु वृद्धा बा का अन्तिम दर्शन नहीं कर सके। मृत्यु के समय बा की उम्र ७४ वर्ष की थी। आगा खाँ भवन में ही समाधि बनी। बापू तथा उनके पुत्र देवदास गांधी आदि ने धधकती हुई "बा" के चिता को देखा और फूल बर्साये। अस्थियाँ इलाहाबाद त्रिवेणी में समर्पित की गईं। देश-विदेश के महापुरुषों ने बा के त्याग एवं तपस्या की मुक्त कंठ से प्रशंसा की।

सेवाग्राम
वर्धा होकर (मध्य प्रांत)

प्रिय श्री तिवारी,

पू. बापूजी के नाम आपका ता. २१.१.४५ का पत्र मिला। "कस्तूरबा" नामक पुस्तिका भी। धन्यवाद। आप उचित समझें तो पुस्तिका प्रकाशित करें और उसकी आमदनी का जो सदुपयोग करना चाहें करें। बापू को पुस्तिका बहुत पसन्द आयी।

स्नेही
श्रीमन्नारायण
हिन्दी-विभाग

(इस संस्करण की १००० प्रति की आमदनी कस्तूर बा फंड में दी जायगी।)

—प्रकाशक

पतिव्रता

पार्वती, हिमालय की पुत्री;
योगी शङ्कर सँग ब्याही थी।
व उसने भी जीवन अनन्त;
निज पतिव्रत धर्म निबाही थी ॥

वैसे ही तू; योगी "बापू"
पति कलि में भी अवगाही थी।
अपनाए रही पति धर्म सदा;
गई अमर पुरी की राही थी ॥१॥

कस्तूर बा

पति जेल गये, तू जेल गई;
यदि कुटी में आये वहीं गई।
सुखमें, दुखमें रही साथ झेलती:
बिलग कहीं भी नहीं गई॥

रही कमण्डल लिए हाथ;
बापू की लँगोटी जहीं गई।
ज्यों गिरिजा संग महादेव के;
वृष, डमरू जहाँ गये वह गई॥२॥

पतिधर्म हमारे ऋषियों ने,
है कहा जो; तूने पाली थी।
मन, बचन, कर्म से पति-आज्ञा;
'बा' तू ने कभी न टाली थी॥

पति कल्पवृक्ष-सा फल दाता;
तू बनी उसी की माली थी।
थी किये समर्पण पति चरणों में;
स्वयं देह ही खाली थी॥३॥

यह विनय हमारी करबद्ध है;
बापू को वहाँ बुलाना मत।
इस विश्व में हे "बा" निज करते;
हमें अब अनाथ कहलाना मत ॥

हुए तुम विहीन यह दुःख दुसह;
रखना यह ध्यान भुलाना मत।
बापू हैं यहाँ उस निठुर देव से;
मातु कभी बतलाना मत ॥४॥

खद्दर-प्रेम

बापू ने कहा—"खद्दर पहनो"—बन गई उसी की आदी।

है छिपा हुवा साम्राज्यवाद, व;
शोषकता का नाश यहीं।
अपनाए बिन इसे; देश की;
स्वतन्त्रता की आश नहीं॥

थी जान चुकी पद-दलित देश की;
छिपी यहीं आजादी॥
बापू ने कहा "खद्दर पहनो";
बन गई उसी की आदी॥

खद्दर-प्रेम

मखमल, मलमल की लालच में;
हम सत्ता अपनी भूले।
पहन विदेशी वस्त्र चुटकिले;
झूठे मद में फूले॥

जानें स्वतन्त्रता - द्रोही किसने,
पथ यह हमें दिखा दी।
बापू ने कहा "खद्दर पहनो";
बन गई उसी की आदी॥

दिन वे ही भल थे; निज खेतों में,
हम कपास बोते थे।
गाँव, शहर में वस्त्र बूनने—
के, करघे होते थे॥

दिन भर बैठी सूत कातती;
हमरी बूढ़ी दादी॥
बापू ने कहा "खद्दर पहनो";
बन गई उसी की आदी॥

कर कमलों से सूत कातती;
"बा" नित ही नियमित थी।
रोग - ग्रसित या कुटी - सेवा से;
होती भी जो श्रमित थी॥

जीवन भर तन पर दीख पड़ी;
खद्दर की साड़ी सादी।
बापू ने कहा "खद्दर पहनो";
बन गई उसी की आदी॥

जब से हम सब त्याग इसे;
अपनाए वस्त्र अपर की।
बनते गये कंगाल विश्व में;
निकल गई सब घर की॥

भूखी चालीस करोड़ जनता को;
भोजन देगी खादी।
बापू ने कहा खद्दर पहनो;
बन गई उसी की आदी॥

खद्दर प्रेम

शनैः शनैः हम लुटे जा रहे;
अपने इस अवगुन से।
सभ्यता हमारी छुटी जा रही;
नव - फैशन की धुन से।

लूट गया निज स्वाभिमान, अरु,
लूटे सोना, चाँदी॥
बापू ने कहा "खद्दर पहनो;
बन गई उसी को आदी॥

लिए रही खद्दर की चादर,
उसी का पूजा आसन।
जाड़े में खद्दरी दोलाई;
बना खद्दरी डासन॥

मरने पर भी कफन हेतु
उस जेल में गई खादी॥
बापू ने कहा "खद्दर पहनो;
बन गई उसी की आदी॥

देती गई सन्देश हमें है—
"तुम इस को अपनाओ।
डुबी जा रही भारत - नौका;
लालन इसे बचाओ॥

अन्यथा हो गई अरु होगी;
इस बिन तेरी बर्बादी॥
बापू ने कहा "खद्दर पहनो;
बन गई उसी की आदी॥

बापू से प्रत्युत्तर

ज्यों रामचन्द्र ने कहा सीय से ;
"वन-दुख सह न सकोगी तुम ।
तृण-शैय्या; फल कन्द-मूल पा ;
जीवित रह न सकोगी तुम ॥

वन में हिंसक-जन्तु-व निशिचर ;
रहते हैं हे सीय सदा ।
स्वर्ण-हिंडोले-वासिनि भार्या ;
होवोगी भयभीत कदा ॥१॥"

सीय ने उत्तर दिया—"प्राणपति ;
होगा नहिं दुख नाम मात्र।
हे नाथ ! त्याग बन जाओगे ;
मैं होऊंगी ज्यों रिक्त पात्र॥

बिन पति जीवन है सून नारि ;
ज्यों तृण सूखा बिन रस का हो।
हों विलग कभी पति-सेवा से नहिं ;
जहां तलक निज बस का हो ॥२॥"

त्यों; बापू ने कहे–"जेल-यातना ;
'जगदम्बा' सह सकती हो ?
चलूंगी करने सत्याग्रह ;
तू बार-बार हठ करती हो ?

अन्याय करेंगे शासक गण ;
वे शांत-चित्त सहने होंगे।
बर्सेंगे डंडे बाँह पीठ पर ;
आह नहीं कहने होंगे ॥३॥

बापू से प्रत्युत्तर

कोमल-गात्री नारि हो वृद्धा ;
वे प्रहार निर्दय होंगे ।
वज्र-शिला सम किये अंग ;
वे सहेंगे जो निर्भय होंगे ॥

जेल के भोजन साग-पात पर ;
कैसे प्राण बचावोगी ?
हे प्राणेश्वर ! सँग जा सकती ;
पर लौट शायद ही आवोगी" ॥४॥

सुनते बापू के भोले बच ;
"बा" क्षण एक बैठी मौन रही ।
हँसते-हँसते प्रत्युत्तर में ;
उसने यों उनसे बैन कही—

"कहते पति-कर्त्तव्य नाथ ;
है सुहृद, स्वपति का धर्म यही ।
गहे पाणि पर पुत्री की ;
रक्षक हों; पति का कार्य यही ॥५॥

किन्तु; मैं न मानती कभी;
एक सत्याग्रही बनूंगी ही ॥
मानवता के दास बने हो;
दासी तुच्छ रहूँगी ही ॥

सहने की जो कहते हो;
भारत-माँ हित सब सह सकती।
क्रूर, कुशासक करें क्रूरता;
फिर भी जीवित रह सकती॥ ६ ॥

होता प्रौढ़ आत्म-बल सब से;
उसे कुचलना सहज नहीं।
कोमल - गात्री हूँ अवश्य;
मिट्टी की पुतली महज नहीं।

साग - पात होंगे अमृत सम;
करना यदि उपवास भी हो।
कर सकती मैं आजीवन;
लखना जो कभी त्रास भी हो" ॥ ७ ॥

बापू से प्रत्युत्तर

बापू मन ही मन प्रसन्न हो;
'बा' की किये प्रशंसा कुछ।
लेने हेतु परीक्षा फिर भी;
प्रगट किये निज मंशा कुछ—

"बात एक सच्ची कहना;
मैं पूछ रहा हूँ "जगदम्बा"
मोह न होगा उन्हें छोड़ते;
जिनकी बनी हो तू अम्बा ?॥८॥

मान भी लूं जो सत्य तुम्हारा;
अन्य त्याग हित कहना है।
माँ हृदयी हो; छोड़ उन्हें घर;
विलग जेल में रहना है।"

बा बोली—"क्यों बार-बार
हे स्वामी मुझे परखते हो!
आज नहीं वर्षों से सँग हूँ;
आत्म-दुर्बलता लखते हो? ॥ ९ ॥

पुत्र जिसे चालीस करोड़;
वह चार लिए क्यों मोह करे !
अन्य बिलखते छोड़; निर्दयी-
माँ क्यों इनका छोह करे ? ।।

मैं प्रस्तुत हूँ जीवन बलि दे,
भारत माँ उद्धार करूँ ।
सुखी रहे सन्तान सर्वदा;
स्वर्ग जाय भी प्यार करूँ" ।।१०।।

जेल गई; फिर मुक्त हुई;
दुख 'बा' को विचलित कर न सके
नौ अगस्त को गई पुनः
'वह जीर्ण' कि; निजप्रण टर न सके।

दम्पति जेल - तीर्थ पहुँचे;
हम हों स्वतन्त्र कहते - कहते ।
साम्राज्यवाद - पोषक क्रूरों के,
अनाचार सहते - सहते ।।११।।

बापू से प्रत्युत्तर

था अन्तिम साथ वहीं तक ही;
'बा' जग से नाता तोड़ चली।
प्राप्त हेतु बापू के पुष्प,
केवल समाधि ही छोड़ चली।

सत्य हुए बापू के वचः
'बा' पुनः न वापस हा! आई।
गई सदा के लिए बिछुड़
रह गई कहानी दुखदाई ॥११॥

बा + पू = बापू

बिन सीता; राम अधूरे थे;
मिलते ही "सीताराम" हुए।
कर पाये पूरन देव - कार्य;
दैत्यो के हित बिधि बाम हुए ॥

थे बने विजेता परशुराम;
'बल' परशु संग में होने से।
न तो हो सकता क्या बल पौरुष;
केवल मुनि भृगु-सुत होने से ॥ १ ॥

बा+पू=बापू

'राधिका' न होती 'श्याम' केवल,
रह जाते मोनो घटा घने।
उसकी प्रतिभा से वासुदेव-सुत;
श्याम से राधेश्याम बने॥

गिरिजा जैसी जब सती मिली;
"भोला कहलाये महादेव!
न तो राख लपेटे; डमरु लिए
फिरते; को पूछता; कौन देव!॥ २॥

त्यों 'बा' अर्धाङ्गी 'पू' में मिल;
बापू को पूर्ण बनाए थी।
वह स्वच्छ स्वर्ण में मणि सम मिल;
प्रतिभा से विश्व जगाए थी॥

मिलती न अनुचरी "बा" सम यदि;
'पू' कैसे बापू हो जाते!
करते जन - सेवा लाख किन्तु;
शायद ही पूरन होपाते॥ ३॥

कस्तूर बा

किये जो जग-हित कार्य उन्होंने;
सबमें 'बा' का हाथ रहा।
बापू ने लगाये कर अपने;
तहँ 'बा' का पहले माथ रहा॥

चन्द दिवस या चन्द वर्ष नहिं;
आजीवन का साथ रहा।
अपर भले ही कहें न; पर,
यह भारत आज अनाथ रहा॥ ४।

किसानों के प्रति

उभय समय जो भोजन दें; क्या हम पर उनका भार नहीं ?

मिट्टी खोद - खोद कर जिनने,
हमें है जीवन दान दिये ।
जेठ-दुपहरी, माघ की ठिठुरन,
में भी; अपने जान दिये ॥

हमें बचाने हेतु जिन्होंने;
तिलाँजलि निज मान दिये ।
उनकी सेवाओं को हम सब;
कभी करें स्वीकार नहीं ? ॥

कस्तूर बा

उभय समय जो भोजन दें;
क्या हम पर उनका भार नहीं ?
रहे स्वयं ही नग्न; जिन्होंने
हमें वस्त्र है पहनाया।

होते गये दूरतम हम;
फिर भी अपना कह अपनाया ॥
रहे अशिक्षित स्वयं; किन्तु;
शिक्षित हमको है बनवाया।

समय पड़े पर हम कृतघ्न;
कर दें उनका उपकार नहीं ॥
उभय समय जो भोजन दें;
क्या हम पर उनका भार नहीं ? ॥

रहते महल अटारी में हम;
जिनकी पौरुषता पर ॥
निर्मित फूस; बूंद भी न ठहरे;
हाय नियति ! उनका घर ॥

किसानों के प्रति

क्रूर कुशासक हैं करते;
क्या हम भी करें अनादर ? ॥
आशा करें वे समुचित हमसे,
क्या उनका अधिकार नहीं ?" ॥

उभय समय जो भोजन दें;
क्या हम पर उनका भार नहीं ?॥
चन्द साहु उन भोले - भाले;
कृषकों को हैं नोच रहे।

शोषक रक्त चूस बैठे;
अब हड्डी पिसना सोच रहे ॥
कल, बल, छल, सब भाँति उन्हें वे;
निज स्वारथी दबोच रहे।

मानव हृदयी 'बा' 'बापू'
सह सके ये अत्याचार नहीं ॥
उभय समय जो भोजन दें;
क्या हम पर उनका भार नहीं ? ॥

दम्पति ने कमण्डल हाथ लिए;
शोषित के प्राण बचाने थे।
"मानव, मानव का भक्षक हो;
समझो अन्याय" बताने थे॥

मानव मात्र एक सम हैं;
बस ये उपदेश पढ़ाने थे।
कृषकों के रक्त चूसने से;
भर पायेगा भण्डार नहीं॥

उभय समय जो भोजन दें;
क्या हम पर उनका भार नहीं?
खायें जिनकी अर्जित सम्पति;
उन्हीं का हम संघार करें?

करते हित उन्हीं सँग क्या हम;
हा पशुओं सा व्यवहार करें?
करें प्रकाश हमारे घर;
उन्हीं के घर अन्धकार करें?॥

किसानों के प्रति

क्या आह निकल उनके मुँह से;
झुलसायेगी संसार नहीं ? ॥
उभय समय जो भोजन दें;
क्या हम पर उनका भार नहीं ? ॥

बच्चे हैं उनके तरस रहे;
गज भर भी वस्त्र न मिल पाता ॥
शिक्षा से वंचित हैं मानों;
है इस समाज से क्या नाता ॥

भोज्य हेतु ही जग में उनको;
निर्मित किये क्यों ? जगत्राता ।
बोलें हो संगठित अगर वे;
निकलेंगे अंगार नहीं ?

उभय समय जो भोजन दें;
क्या हम पर उनका भार नहीं ?
लज्जा ढकने हित उनकी
धरनी पाती हैं वस्त्र नहीं ।

हाय! हाय!! कर सकते केवल,
वचा दूसरा शस्त्र नहीं ।।
बापू ने कहा–"शोषण न करो;
उनका तू-समझ निःशस्त्र कहीं ।।

उनमें वह थी प्रबल शक्ति
है जिसका पारावार नहीं ।।"
उभय समय जो भोजन दें;
क्या हम पर उनका भार नहीं ? ।।

राष्ट्रीयता

भारत-माँ बन्धन-विमुक्त;
"बा", "बापू" ने प्रण ठाना था।
करने हित यह कठिन कार्य;
कर केवल अहिंसा-बाना था॥

"भारत-माता होवे स्वतन्त्र;"
मुख एक राष्ट्रीय गाना था।
चुपके - चुपके दुर्दैव निठुर
लिख रहा वहाँ परवाना था॥ १॥

किञ्चित दिन और ही रुक जाता;
थी कौन सी जल्दी पड़ी हुई।
क्या स्वर्ग में भी परतन्त्रता की,
कोई आन समस्या खड़ी हुई ?॥

यों कार्य अधूरा रहा यहां;
हे देव ! भूल यह बड़ी हुई।
हम भारतीय हो गये विकल,
ज्यों बिलग सँजीवन-जड़ी हुई॥ २॥

ले तिरँग पताका बलि-वेदी पर;
'बा' ने शीश झुकायी थी।
जिस भारत-मां के गोद पली;
उसकी ऋण स्वल्प चुकायी थी॥

यदि काल-कुचक्री न छल करता;
वह स्वतन्त्रता नियरायी थी।
जिसकी छाया में आर्य-सन्तति;
वर्षों सहर्ष रह आयी थी॥ ३॥

राष्ट्रीयता

भारत मां बँधित विलोकि;
श्री "बा" मनोपि-मन दहल उठा ॥
उनके सुकर्म व पुण्य प्रबल से;
राष्ट्रीयता - महल उठा ॥

हुँकार जो निकली बा के मुख;
उस सिन्धु पार भी कहल उठा ।
वर्षों मृत सम पड़ा आर्य वंश;
अब निज पग पर है टहल उठा ॥ ४ ॥

तू ने है पिलाई क्षीर हमें;
हे मातु ! कभी न व्यर्थ होगा ।
यदि उसकी लाज रखा न दैव;
समझो कि महा अनर्थ होगा ॥

भारत होगा आजाद; सत्य;
वर तेरा वह समर्थ होगा ।
मारग जो दिखाई है तू ने;
उससे पूरन मनोर्थ होगा ॥ ५ ॥

कस्तूर बा

है जान डाल गई भारत में;
युग-युग तक ऋणी रहेंगे हम।
अवतारी देवी थी तू "बा;"
वे अन्य कहें न; कहेंगे हम॥

रोपित सुवृक्ष तव हाथों से,
रक्षा हित दुःख सहेंगे हम।
उजड़े न वृक्ष देना वर तू;
आजादी; सत्य; लहेंगे हम॥ ६॥

मानव-सुभेच्छिका

राजनीति में साधुनीति बापू ने ही अपनाए ।

पीर मुहम्मद ने बतलाया;
राजनीति 'असि' बल पर ।
योरुप के गुरु क्राइस्ट ने;
है कहा त्याग केवल पर ।

कैथोलिक, प्रोटेस्टेन्ट मतवालों ने,
माना निर्मित छल पर ।
जेम्स प्रथम ने राजाओं को;
प्रभु - प्रतिनिधि ही बताए ।।

राजनीति में साधुनीति बापू ने ही अपनाए ।

कस्तूर बा

ऋषि मनु ने कही आत्म-शुद्धता,
व गौतम ने अहिंसा।
क्रूर मुगल, पठानों ने;
अपनाए केवल हिंसा।

राणा, गोविन्द, शिवा, छत्र को;
सूझी थी प्रति हिंसा;
ह्यूम, बनर्जी, तिलक आदि ने,
संगठन मुख्य बताये।

राजनीति में साधुनीति बापू ने ही अपनाए।

बापू ने—!

त्याग, तपस्या, सत्य, अहिंसा,
की संग में ले टोली।
हरिजन दलितों के सुधार-हित;
लिए बगल में झोली।

तेहि पीछे मानव - शुभेच्छिका;
"बा" मनीषि थी भोली।

थे चले जा रहे बापू जग-हित,
अनुचर हमें बनाए ॥

राजनीति में साधुनीति बापू ने ही अपनाए ।

हैं नीतिज्ञ विश्व में जितने;
मानवता के द्रोही ।
शोषक नर - रक्त; प्राण - पिपासे;
स्वारथ - अश्वारोही ॥

उनके मुख सु-साधु 'बापू' भी;
कहे गये विद्रोही ।
जीव - मात्र के सुख-हित जिसने;
शान्तिः पाठ पढ़ाये ॥

राजनीति में साधुनीति बापू ने ही अपनाए ।

धर्म-प्रवर्तिका

धर्म हमारा पलट चुका; अब नया धर्म स्वीकार करें।

दिन बीत गये काशी, प्रयाग में,
कुम्भ व ग्रहण नहाने के।
व्यय कर सहस्रों केदारनाथ
या जगन्नाथपुर जाने के।

देश के लाखों निर्धन जन;
मुहताज हैं दाने-दाने के।
धर्मिष्ठों! समझें महा तीर्थ;
भूखों के प्राणोद्धार करें।

धर्म हमारा पलट चुका; अब नया धर्म स्वीकार करें।

तीर्थों के पण्डे; धर्म - दलालों-
से परिचित हैं आप नहीं ?।
केवल कहना इतना होगा;
वे देव हैं देते आप नहीं ॥

दान - धर्म करते रहना;
है मानव - कर्तव्य पाप नहीं।
पर; अनाथ, भूखे नंगों के;
भोजन अंगीकार करें ॥

धर्म हमारा पलट चुका; अब नया धर्म स्वीकार करें।

आयें अतिथि उन्हें आश्रय दें;
है गार्हस्थ्य - सुधर्म यही।
भूखों को भोजन देकर व;
नंगों को ढक दें कर्म यही ॥

सब में एक समान रक्त है;
मिट्टी निर्मित चर्म यही।
लाखों त्याज्य बने हरिजन;
पद - दलितों का सत्कार करें ॥

धर्म हमारा पलट चुका; अब नया धर्म स्वीकार करें।

मनिया ले अब अहो - दिवस;
भारत माँ के गुण - गान करें।
व्यय करना हो धन सुकर्म में;
महासभा को दान करें॥

हो स्वतन्त्र हम अपर - जनों से;
निज संस्कृति का मान करें।
हमें चाहते बन्धित रखना;
उनका हम दुत्कार करें।

धर्म हमारा पलट चुका; अब नया धर्म स्वीकार करें॥

लेना हो यदि धर्म - ध्वजा;
यह तिरँग पताका अपना है।
पहुँचायेगा स्वर्ग यही; अब,
अन्य सहारा सपना है।

पञ्च महायज्ञ; व्रत इन्द्रिय - दम;
भारत - माँ हित तपना है।
धर्म - प्रचारक बनना हो,
निज राष्ट्रीयता - प्रचार करें॥

धर्म हमारा पलट चुका; अब नया धर्म स्वीकार करें।

हवन-कुण्ड पट गये; नई अब
बनी है माँ हित बलि - वेदी।
हँसते - हँसते चढ़ जा वीरो;
हो जय - जयकार गगन - भेदी।
तिलक, लाजपत, भगतसिंह;
अमरों ने निज आहुति दे दी।
मच जाय तहलका दूर, दूरतम;
संगठित वह हुँकार करें॥
धर्म हमारा पलट चुका; अब नया धर्म स्वीकार करें।

ध्यान धरें—"जग - कर्मक्षेत्र में,
भारतीय कैसे रहते।
हुए हैं हम परतन्त्र पाप से,
तरह - तरह के दुख सहते"।
क्रूर विदेशी "काले, पशु सम;
दास" न जानें क्या कहते।"
विनय हो करबद्ध; निज पुत्रों का;
उज्वल - मुख करतार करें॥
धर्म हमारा पलट चुका; अब नया धर्म स्वीकार करें।

तीर्थाटन नहिं छूट पायेगा,
जेल - तीर्थ करना होगा।
गङ्गा - जमुना - तट मृत्यु सदृश;
उपवास किये मरना होगा।

हुवा स्वतन्त्र देश; मानो फल;
तिहूँ लोक तरना होगा।
नई धर्म - नौका चढ़ हम सब
भव - सागर को पार करें।
धर्म हमारा पलट चुका; अब नया धर्म स्वीकार करें।

राष्ट्र-माता—

पहने थी कहीं से राज मुकुट,
या सोने का सिरताज नहीं।
छूट जाय बैरी के बल;
था वैसा डगमग राज नहीं॥

लूट - लूट निःपंगु प्रजा;
रखनी थी अपनी लाज नहीं।
थी बनी राष्ट्रमाता जैसी,
है हुई; न होंगी, आज नहीं॥ १॥

कस्तूर बा

विस्तृत भूमि व राजमहल,
नहिं राजकोष अधिकारी थी।
स्वर्ण - हिंडोले झूली हो;
वैसी नहिं राज दुलारी थी।

—तब क्या थी—

सेवाग्राम - कुटी - वासिनि;
साधुनी कमण्डल धारी थी।
चालीस करोड़ मानस-स्वराज्य—
अधिपति 'बा' मातु हमारी थी ॥ २ ॥

सेवाग्राम को पर्णकुटी;
था राजमहल 'बा' का जानो।
खद्दर - निर्मित विस्तर कम्बल;
सिंहासन स्वर्ण - रचित मानो।

सत्य, अहिंसा, दया, धर्म;
ये रक्षक उनके द्वारपाल।
राष्ट्रपिता 'बापू' विधि ने
पति अङ्कित किये थे मातु-भाल ॥ ३।

राष्ट्र- सेविकाएं विभिन्न,
थीं संग-सहेली; सदा रहीं।
कुटी वास, निज पितृ-भवन
या जेल - तीर्थ यत्रवदा रहीं॥

पति - सेवा, मानव - सेवा; ये
मणि - निर्मित आभूषण थे।
प्रेम - प्रजा सुख - हेतु बीतते;
"बा" के जीवन के क्षण थे॥ ४॥

त्याग

त्यागे थी पुत्र-पतोहुन के सुख;
व नसुधा की जो सम्पति माया।
कोठी, अटारी का बास तजी;
कुटिया अरु जेल में ही मन भाया॥

तेल - फुलेल जे वाह्य - सजावट;
छोड़े थी स्वच्छ किये निज काया।
पुत्र से जानती विश्व के पुत्रों को;
पुत्री समान ही विश्व की जाया॥ १।

त्याग

त्यागे थी सौख्य शृङ्गार निरर्थक;
प्रौढ़ शृङ्गार वही पति-धर्म था।
मानव - मात्र स्वतन्त्र करूँ;
दिन रात यही एक सूझता कर्म था॥

पराधीनता चाहता है न कोऊ;
पहचान में आगया मानव-मर्म था।
प्रति हिंसा की भावना त्यागे थी माँ;
याततताइयों के लिए लोहूही गर्म था॥ २॥

त्यागे थी विश्व-विद्यालय - पाठ्य;
व देश-विदेश के हाट की भाषा।
चाह नहीं कहीं होऊँ प्रधान;
या वस्तु-व्यापार से द्रव्यकी आशा॥

भूली थी नाट्य सिनेमा की दौड़;
व कैरम सतरञ्ज खेल-तमाशा।
पल जीवन के बितें देश-हितू;
रही मृत्युलौं 'बा' मनकी अभिलाषा॥ ३॥

कस्तूर बा

महासभा की सभानेत्री बनूँ; या;
बनूँ किसी विस्तृत राज्य की रानी।
लोग कहें मुझे रत्निका देश की;
या कही जाऊँ गुणज्ञ, सुज्ञानी॥

हो जग में मेरी ख्याति; चहूँ;
नर स्वार्थ-प्रवीण कहा करें दानी।
त्यागे थी; व्यर्थ के मानकी आशायें;
प्राणी ही मात्र की सेवा थी ठानी॥ ४॥

*

सत्याग्रही—

सत्याग्रह एक नया शस्त्र बापू ने अनुसन्धान किए।

हिंसा द्वारा प्राप्त राज्य - बल,
सदा रहा है अस्थायी।
पलट गया व पलट जायगा;
विजितों में ताकत आयी॥

रक्त - पिपासे शासक को;
हैं कहते 'क्रूर—सदा न्यायी।
यह विधान भारत - स्वतन्त्र-हित;
युक्ति - पूर्ण अनुमान किये।
सत्याग्रह एक नया शस्त्र बापू ने अनुसन्धान किए।

शासक वर्त्तमान भारत के;
राज्य लिए कितने छल से।
करते हैं नित अनाचार या
शासन शस्त्रों के बल से॥

उनसे लेना राज्य हमें है;
अँगुली ज्यों पत्थर-तल से।
विफल न होंगे लिए शस्त्र यह;
ऐसा मन में मान किए।
सत्याग्रह एक नया शस्त्र बापू ने अनुसन्धान किए॥

'बापू' ने किये स्वयं सत्याग्रह
प्रथम; अफ्रिका में जाकर।
एक जून नाह सप्ताहों;
सूखी रोटी, शक्कर खाकर॥

बाद में हुवा प्रसार शस्त्र का;
जन्मभूमि भारत आकर।
वहाँ के लाखों भारतीय ने;
मुक्तकण्ठ गुण गान किये॥

सत्याग्रही

सत्याग्रह एक नया शस्त्र बापू ने अनुसन्धान किए।
'बा' पग पीछे रहा न; आई;
विपदाएँ झेलती रही।
रही अस्वस्थ व कृश-तन फिर भी;
प्राणों पर खेलती रही॥

स्वतन्त्रता - रथ बापू खिंचते;
पीछे से ठेलती रही।
रुके न; शासक क्रूरों ने,
पथ में गोली या म्यान किये॥

सत्याग्रह एक नया शस्त्र बापू ने अनुसन्धान किए।

हुए भिज्ञ हम शनैः शनैः;
इस महा शस्त्र के रूपों से।
किये सामना समय - समय पर
शासकगण व भूपों से।

लिए खींच लाखों सु-बन्धु;
अज्ञान के बड़े कूपों से।
सत्याग्रहियों की विस्तृत—
सेना का नव - निर्माण किए।

सत्याग्रह एक नया शस्त्र बापू ने अनुसन्धान किए ।

जहाँ गये सैनिक सु-शस्त्र ले,
वहीं विजय श्री हाथ रही ।
मिलती क्यों न रुके किससे;
जब आदि शक्ति ही साथ रही ॥

होते बिलग आज जिसके,
भारत-सन्तति ही अनाथ रही ।
हो स्वतन्त्र भारत सु-शस्त्र ले;
राष्ट्रपिता बरदान दिये ॥

सत्याग्रह एक नया शस्त्र बापू ने अनुसन्धान किए ।

—सत्याग्रही के लक्षण—

दासता किये निज पोषण हित;
होता उनका सिद्धान्त नहीं ।
रुपये - पैसे लाख कमायें;
आत्मा होती शान्त नहीं ॥

सत्याग्रही

—किन्तु—

सच्चा सत्याग्रही एक का;
लक्ष्य सदा महान् होगा।
उसके रक्त - सिंचित - सुवृक्ष तर;
शान्त सु-चित जहान होगा॥

सत्याग्रही एक सैनिक - विधि;
सदा खद्दर - धारी होवे।
सत्य - पुजारी; त्याग, अहिंसा;
सहन - अस्त्रधारी होवे॥

चक्र - सुदर्शन सम चर्खा ले;
समर - क्षेत्र में डटा रहे।
व्रत ले सच्चे ब्रह्मचर्य का;
भोग - रोग से हटा रहे॥

समता भाव मनुष्य - मात्र सँग;
सेवक मानवता का हो।
किन्तु काल सम बैरी वह;
क्रूरता व दानवता का हो॥

मातृभूमि - बन्धन - विमुक्त;
वह भीष्म-प्रतिज्ञा कर लिये हो।
प्रण न जाय बलि प्राण भले ही;
कफन शीश पै धर लिए हो॥

देख राष्ट्रीय ध्वजा तिरंगा;
उसका हृदय फड़कता हो।
कर में ले सामना करे तो;
बैरी हृदय धड़कता हो।

निज भाषा, सांस्कृतिक सभ्यता;
में जिसकी ममता होवे।
देश - मान हित सब प्रकार
दुख सहने की क्षमता होवे॥

*

चर्खा—

हे चर्खा ! केवल तेरे बल ।
हे पुर्खा ! केवल तेरे बल ॥
बूढ़े भारत की रही आन ।
दी थी जग को सभ्यता दान ॥

है शिष्य आज तक भी जहान ॥
था लक्ष्य सदा जिसका महान ॥
तेरे ही बल हम हे सुजान ।
जग में थे गिरि से भी अविचल ॥

हे चर्खा ! केवल तेरे बल ।
हे पुर्खा ! केवल तेरे बल ॥

चाह नहीं थी मखमल की।
कामना नहीं थी मलमल की॥
लङ्काशायर की आश नहीं।
जापान चीन का त्राश नहीं॥

घर में दरिद्रता वास नहीं।
हम खड़े रहे निज पैरों बल॥
हे चर्खा ! केवल तेरे बल।
हे पुर्खा ! केवल तेरे बल॥

बन्धन में कभी न जकड़े थे।
सभ्यता लिए निज अकड़े थे॥
थी अन्न - वस्त्र की हाय नहीं।
आपस में लड़ते भाय नहीं॥

थीं अन्तरिक्ष माँ गाय नहीं।
गो-रस बहता ज्यों गङ्गा-जल॥
हे चर्खा ! केवल तेरे बल।
हे पुर्खा ! केवल तेरे बल॥

चर्खा

विधवाएँ पाती रोटी थीं।
रक्षित हिन्दुओं की चोटी थीं॥
अपरों की गलती दाल नहीं।
क्रूरों की चलती चाल नहीं॥

थे अर्ध - मृतक सम लाल नहीं।
शेरों से उनके वक्षस्थल॥
हे चर्खा ! केवल तेरे बल।
हे पुर्खा केवल तेरे बल॥

* * *

भवन - भवन में शान्ति रही।
सबके मुख एक सी कान्ति रही॥
था शोषकता का नाम नहीं।
था अनाचार का काम नहीं॥

थे उजड़े सारे ग्राम नहीं।
हम भारतीय सब थे निश्छल॥
हे चर्खा ! केवल तेरे बल।
हे पुर्खा ! केवल तेरे बल॥

आपस में मेल - मिलाप रहा।
च विस्तृत काव्य - कलाप रहा॥
था इन्द्रपुरी का वास यहीं।
लक्ष्मी का रहा निवास यहीं॥

हम भारतीय - मन ह्रास नहीं।
हम बने विश्व में थे सम्बल॥
हे चर्खा! केवल तेरे बल।
हे पुर्खा! केवल तेरे बल॥

* ❀ *

अपनी - अपनी थी पड़ी नहीं।
थी विकट समस्या खड़ी न ।
ऋण का था हम पर भार नहीं।
लख हँसता था संसार नहीं॥

जग कहता रहा गँवार नहीं।
था प्रौढ़ हमारा अन्तस्थल॥
हे चर्खा! केवल तेरे बल।
हे पुर्खा! केवल तेरे बल॥

चर्खा

हे 'बा' के कर का विष्णु-चक्र।
तुझ पै शोषकगण - दृष्टि वक्र॥
उनका है तुझ से प्रेम नहीं।
चाहते तुम्हारा क्षेम नहीं॥

जँचता है तेरा नेम नह
निर्धन हो सकते पुनः प्रबल॥
हे चर्खा ! केवल तेरे बल।
हे पुर्खा ! केवल तेरे बल॥

सेवाग्राम—

हे अमरपुरी ! हे स्वर्गधाम !

अचल हिमालय सम तू हो;
निर्मल गंगा की जन्मभूमि।
निकला सत्य - प्रवाह जहाँ से;
निर्मलता हित अन्य भूमि॥

जगन्नाथपुर तुम ही हो;
हे बापू की अनन्य भूमि।
दर्शन करते होते विनष्ट
हैं; जग- प्रपंच; मद, लोभ, काम॥

हे स्वर्गपुरी ! हे स्वर्ग धाम

त्रिविध बयारि चलें निशि दिन
हो मिलती जाकर शान्ति जहाँ।
क्रोध, पाप होते विनष्ट;
टिकने पाती नहिं भ्रान्ति जहाँ॥
पापी पहुँच न पाते हों;
उनके हित मानों क्रान्ति जहाँ।
वह शान्ति, शौर्य दाता जग में;
ज्यों हिम पर बद्रीनाथ धाम।
हे अमरपुरी! हे स्वर्ग धाम॥

* * *

साधु रमाये धुईं रहें;
जग - सुख; वैभव की चाह नहीं।
लखकर सम्पति; माया जग की;
होता जिनके मन दाह नहीं।
प्राप्त हेतु निर्माण; अभय - पद,
अपर विश्व में राह नहीं।
वह हरद्वार सम बा के धाम
जग में तू हो हे सेवा - ग्राम!॥
हे अमरपुरी! हे स्वर्ग धाम॥

कस्तूर बा

शान्ति, सुपाठ पढ़ाये जग को;
स्वयं सहे दुख द्वन्द सदा।
फटक न पाये लोभ, मोह
जग की माया या फन्द कदा।

अमृत दान करें देवों को;
असुरों से हो द्वन्द यदा।
वह केदारनाथ पुर तुम हो;
नव-भारत के मुक्ति - धाम॥
हे अमर पुरी! हे स्वर्ग - धाम॥

आगा खाँ-भवन—

भारतीय सन्तानों के हित पुण्य भवन तू आज बना।

रहा तू वर्षों भोग्य मुगल-
पठानों के अधिकारों में।
जड़े रहे सुख - वैभव - साधन;
तेरी चहार दिवारों में॥

विलासिता करते प्रसार थे
विषयी मुगल हजारों में।
कारागृह बन देश - प्रेमियों-
का; भू पर सिरताज बना।
भारतीय सन्तानों के हित पुण्य भवन तू आज बना।

कस्तूर बा

तेरी छाया में वास किये
बहु आर्य - सभ्यता - द्रोही थे।
लुटते नित धन - धर्म देश के;
वे शोषक; निर्मोही थे॥

आर्य - वंश व आर्य भूमि के
चिर स्वतन्त्रता - द्रोही थे।
अब प्रवास बन अमरों का;
हे भवन देश का ताज बना॥

भारतीय सन्तानों के हित पुण्य भवन तू आज बना।

तेरे भीतर चिता बनी;
श्री महादेव देसाई की।
बनी समाधि तेरे भीतर;
अमरी जगदम्बा माई की॥

अब न चाहिए आस तुझे;
आगा के नाम दोहाई की।
जीर्ण - काय होते ही तू अब;
विश्व - भवन - युवराज बना॥

भारतीय सन्तानों के हित पुण्य भवन तू आज बना।

नौ अगस्त—१९४२

थे [एकत्र भारत सपूत;
बम्बई नगर के राहों पर।
गिरा रहे थे आँसू दो - दो;
माँ के कठिन कराहों पर॥

अपने कर भारत रखते;
जग में मानव - हित लेख रहे।
न्यायी बनते स्वयं विश्व में;
न्याय थे उनके देख रहे॥ १॥

अन्य न कुछ कहना था; वे
मानव - स्वतन्त्रता - प्रेमी थे।
भारत - माँ हित दुसह यातना
सहने वाले नेमी थे।

महासभा की बैठक थी;
अगस्त आठ के दिन जानो।
निर्णय हुआ "न्याय हो जग में;
भारत भी स्वतन्त्र मानो" ॥ २ ॥

इधर क्रूर शासक पहले से,
अन्य मार्ग चुन बैठे थे।
कारागृह निर्माण किये,
कर शस्त्र धरे मद ऐंठे थे॥

नौ अगस्त का शुभ मुहूर्त;
थे सूर्यदेव भी निकल रहे।
निकले शासक - दल सशस्त्र हो;
अहो- - रात्रि विकल रहे॥ ३ ॥

पकड़े गये प्रधान सभी;
जग में एक नया तूफान उठा।
अन्याय, महा अन्याय एक स्वर;
मुखरित अखिल जहान उठा॥

था नीतिज्ञ लार्ड लिनलिथ गो;
दिया मानवता त्याग नहीं।
होता यदि डायर बन जाता;
जलियाँ वाला बाग नहीं॥ ४॥

प्रान्त - प्रान्त के एक दिवस में;
देश - भक्त सब पकड़ गये।
साम्राज्यवाद - पोषक कुचक्र के;
कारागृह में जकड़ गये॥

"सभी भाँति जकड़ो हमको;
क्या आह न मुँह से बोलें हम?
ऋण ले हम पर भार करो;
अजगर से तनिक न डोलें हम?॥ ५॥

असन्तोष की जगी भावना;
देश अधिक थिर रह न सका।
नौ जवान चल पड़े क्षुब्ध हो;
धैर्य भार ये; सह न सका॥

प्रति हिंसा भावना उठी;
चल पड़े वीर प्रति कोने से।
समझे हो सकते स्वतन्त्र नहिं
हाथ पसारे; रोने से॥ ६॥

जले रेल - डब्बे बीसों; व,
अगणित काटे तार गये।
जले सहस्रों शासन - गृह;
बलि लालन कई हजार गये॥

ले राष्ट्रीय - ध्वजा कितने ही
निज प्राणों पर खेल गये।
बचे खुचे भारत अभाग्य वश;
हँसते - हँसते जेल गये॥ ७॥

नौ अगस्त

सत्तावन की गदर न थी;
निःशस्त्र हृदय का भाव रहा।
उधर शस्त्रधारी सैनिक थे;
इधर भाग्य का दाँव रहा।

हुवा वही जो होना था;
भारत स्वतन्त्रता पा न सका।
हाय नियति ! लूटे सहस्रों;
पर निज सु-लक्ष्य तक जा न सका॥ ८॥

महादेव देसाई—

योगी बापू के सँग रह तू
आजीवन योगी बने रहे।
घरनी, जाया, धन - दौलत तज;
तू मानवता हित तने रहे॥

बापू की सेवा में तेरे;
अपने जो; सभी समर्पित थे।
सौख्य, स्वाद, शृङ्गार सभी;
उनकी सेवा में अर्पित थे॥

महादेव देसाई

बापू - रोपित कल्पवृक्ष;
हे माली सिंचते रहे सदा।
स्वतन्त्रता - रथ में कन्धा दे,
आगे खिंचते रहे सदा॥

जग - शिक्षा; जग - हित सेवा में;
बने दाहिना हाथ रहे।
जहाँ कहीं गये बापू, बा;
हे महादेव तू साथ रहे॥

चित्रगुप्त थे इस युग के;
या स्वयं एक अवतार रहे?
रचने हित एक नयी सृष्टि;
तू स्वयं ब्रह्म करतार रहे?

राष्ट्रपिता के मन्त्री थे;
दे-दे मन्त्रणा सदा समुचित।
पड़ते बापू जब दुविधा में;
बतलाते थे तू राह उचित॥

कस्तूर बा

कौन सी भूल किये बापू ने;
छोड़ उन्हें तू चले गये।
या कि अमरपुर - राजा की;
चिकनी बातों में छले गये ? ॥

रुष्ट न कभी हुए थे तुम
क्यों हम से यों मुख मोड़ गये।
हाय महादेव ! फिर न मिलोगे;
चिर नाता तू तोड़ गये ॥

तेरी भारत - सेवा का;
आँका जा सकता मूल्य नहीं।
होंगे जग में कहीं अभागी;
आज भारतीय तुल्य नहीं ॥

जीते जी हम एक बूँद;
औषधि सेवा में दे न सके।
मरने पर मानव ! शव तेरा;
निज कन्धे तक ले न सके ॥

महादेव देसाइ

फूँक तुझे कारागृह में,
शासक निज मनसा पूर्ण किये।
जीते समय सताये दानव;
मृत्यु में हडडी चूर्ण किये॥

अमरपुरी से देना वर;
उस राख मैं तेरे; वह बल हो।
कारागृह हों चूर्ण - चूर्ण;
व देश प्रमियों में बल हो॥

हो स्वतन्त्र हम भारतीय;
हे अमर ! तेरे गुन गायेंगे।
आज हैं ऐसे बन्धन में;
एक शब्द भी न कह पायेंगे॥

कितने जकड़े हम आज पड़े;
हे मानव ! तुझ से छिपा नहीं।
कटेंगे पाप न; होगी जब तक।
तव आशीष; प्रभु कृपा नहीं॥

[सरसठ

हरिजन—

रक्त, त्वचा, या गुदा आदि;
विधि-सृजित हैं जितने अंग सभी।
देखा गया न हो हम में एक
अधिक; व उनमें भंग कभी॥

सूर्य, चन्द्र देते प्रकाश हों
हमें ही; उन्हें प्रकाश नहीं॥
हो सकता क्या हमें मिले;
पर उनको मिले बतास नहीं?॥ १॥

हरिजन

बहता गंगाजल निर्मल;
क्या सबके लिए समान नहीं ?
सब के पिता एक परमेश्वर ;
है क्या अन्य परमान कहीं ?

काम, क्रोध, मद, लोभ, मोह जब,
सब में एक से वास करें।
हम अज्ञान क्यों एक न्यून;
या एक उच्च की आस करें ॥

भारत - माँ के सब सपूत सम;
इन में एक बेकार नहीं।
घृणा करें हरिजन मानव से;
प्राप्त हमें अधिकार नहीं ॥

करते हमें पवित्र उन्हें;
हम क्योंकर भला अछूत कहें।
किये कौन से ये कुकर्म;
जिससे इन्हें पदच्युत कहें ॥

निकृष्ट हैं इनसे अपर देश के;
'जो हुजूर करते उनके।
करते सदा अनादर इनका;
बनते हैं पक्के धुनके॥

समझा हमने कभी इन्हें;
ये सभी हमारे भाई हैं?
अपमानित हो हमसे लाखों;
बने आज ईसाई हैं॥

करते सेवा हम सब की;
पर; ढक पाते निज गात्र नहीं।
गृह न एक हो कूप कहाँ?
मिट्टी - निर्मित जलपात्र नहीं॥

अपर देश व जाति; धर्म से,
आर्य - वंश कहलाते हैं।
पशु - विष्ठा से अन्न चून;
ये निर्धन मानव खाते हैं॥

दम्पति बापू इनकी रक्षा का;
मानो सिर पर भार लिए।
स्वयं बने भिक्षुक इनके हित;
उन्नति का उद्‌गार लिए॥

पैसे - पैसे भिक्षा ले;
सहस्रों के प्राणोद्धार किए।
सभी भाँति होकर सहाय;
असहायों के उपकार किए॥

समाधि पर—

दें बिखेर तेरी समाधि पर
माँ ! स्वतन्त्र वे फूल नहीं।
नित्य जलाएँ घृत - दीपक;
घर में निज अर्जित तूल नहीं ॥

अगर धूप का वास करें;
है बस वास का मूल नहीं।
कर जोड़े हम हैं भाव लिए;
माँ ! सन्तति जाना भूल नहीं ॥

बा के प्रति हमारा कर्तव्य—

यद्यपि हम हैं, पराधीन;
'बा' हित, कुछ भी कर सकते हैं।
सहते ज्यों लाखों ऋण सिर;
तो स्वल्प अधिक सह सकते हैं।

मृत सम जब हम पड़े आज,
अब बोझ की हो परवाह ही क्या ?
बधित हो चुके पहले ही;
अब मुख से निकले आह ही क्या ॥

कस्तूर बा

आजीवन रक्षिका हमारी;
माँ; क्यों उसे न याद करें।
पा आशीष स्वर्ग से उसके;
भारत - भूमि आजाद करें॥

निर्मित हो एक स्वर्ण-भवन।
या चाँदी की दीवार नहीं॥
कर लाखों व्यय खड़ी करें।
सँगमरमर की मीनार नहीं॥

थी शुभेच्छिका मानवता की।
उसी लक्ष्य के कार्य करें॥
सम सेवा हो सभी लिए।
तर्कना न आर्य अनार्य करें॥

बापू ने बताएँ हैं सुमार्ग;
बस उन्हें हो पूर्ण करें हम सब।
माँ - ऋण से हो उऋण सहज;
भव सागर पार करें हम सब॥

बा के प्रति हमारा कर्त्तव्य

निर्धन भारत की माताएँ;
करतीं प्रसूति कितने दुख से।
दहल उठेगा हृदय अगर;
सुन लें एक माता के मुख से॥

निहित है जिनमें देश - विभव,
अनहित उन्हीं का होता है।
लख अशिक्षिता ललनाएँ
एक निठुर हृदय भी रोता है॥

पैसे - पैसे भिक्षा ले;
हम कुछ रुपये एकत्र करें।
शिक्षालय एवं प्रसूति - गृह;
स्थापित सर्वत्र करें॥

होगा कायापलट देश का;
माताएँ सुख पायेंगी।
समझेंगी कर्मण्य पुत्र निज;
हो प्रसन्न गुण गायेंगी॥

होंगे वंशज वीर, बाँकुड़े;
शिक्षित जग में मान लिए।
झुकेंगे अपरों से न कभी;
भारत - सुपुत्र निज आन लिए ॥

निर्धनता हो दूर दूरतम;
हम से; पुनः न आयेगी।
हुए हैं हम निर्लज्ज विश्व में;
सन्तति लाज बचायेगी ॥

होंगे हम धन - धान्य पूर्ण;
बहुरेंगे वे दिन आशु यहाँ।
ऋद्धि - सिद्धि; नव - निधि सहर्ष;
करती थीं निशि दिन बास जहाँ ॥

होंगे सब विधि प्रबल विश्व में;
भारत - माँ विमुक्त होगी।
बन्धन कटेंगे स्वयं हमारे;
सन्तति सदा मुक्त होगी ॥

बापू—

हे नव भारत के योगो!
तू ने जग को पाठ पढ़ाया;
सत्य, अहिंसा - पथ दरसाया;
सुप्त - हृदय - भय - भूत भगाया;
तेरे ही आशीष शीश ले,
आर्य - सन्तति दृढ़ होगी।

हे नव भारत के योगी॥

तेरी भोली, शङ्कर भोली;
तेरी बोली; मानव - बोली;
तू शङ्कर 'बा' उमा थी भोली;
जग को अमृत पान करा तू
बने स्वयं विष - भोगी ॥

हे नव भारत के योगी।

सत्य, नेम, व्रत से मज्जित हो;
त्याग, तपस्या से सज्जित हो;
अहं क्रोध तू किये विजित हो;
बने स्वस्थ्य तेरी औषधि से
युगों पड़े हम रोगी।

हे नव भारत के योगी।

तेरी लकुटी में वह बल है;
तेरी भृकुटी में वह बल है;
तेरी हड्डी में वह बल है;
दानवता होगी विनष्ट;
मानव - सन्तति सुख - भोगी ॥

हे नव भारत के योगी।

बापू

हे "हरि-जन" हरिजनों के त्राता।
नव - भारत के भाग्य - विधाता॥
विश्व से जोड़ मानवता - नाता।
खुलेगी तेरे ही लट्ठे
भारत स्वतन्त्रता - डोंगी*
हे नव भारत के योगी॥
बाधक प्रबल लगाये डोरी,
करते अन्य कल्पना कोरी।
पकड़ लिए हो मध्य की डोरी
अब से जहाँ लगाये बल तू;
सत्य ! मुक्त "माँ" होंगी।
हे नव भारत के योगी॥

---

* छोटी नौका।